

तेषां निर्वाणसम्प्राप्तिं श्रुत्वा निर्विण्णमानसः। सुधीर्भगीरथश्चापि वरदत्ताय धीमते ॥७४॥
 दत्त्वा राज्यं निजं प्राज्यं जिनस्नपनपूर्वकम्। कैलासाख्यगिरिं गत्वा शिवगुप्तमहामुनेः ॥७५॥
 नत्वा पादद्वयं भक्त्या गृहीत्वा सुतपःश्रियम्। भूत्वा महामुनिर्गंगानदीतीरे मनोहरे ॥७६॥
 संस्थितः प्रतिमायोगं समादाय बुधोत्तमः। तदा सर्वे सुरेन्द्राद्याः क्षीराब्धेस्तोयसद्घटैः ॥७७॥
 श्रीमद्भगीरथस्यास्य भक्त्या पादाब्जयोर्मुदा। चक्रुर्महाभिषेकं च शर्मकोटिविधायकम् ॥७८॥
 तत्प्रवाहं समासाद्य सापि गंगा नदी तराम्। तदा प्रभृति तीर्थत्वं जनानां समुपागता ॥७९॥
 तस्मिन्गंगातटे चापि भगीरथमुनीश्वरः। कृत्वा तपः शिवं प्राप्तो जरामरणवर्जितम् ॥८०॥

स जयतु सगराख्यः केवलज्ञानचक्षुः सकलसुरसमर्च्यो मुक्तिकान्तासुकान्तः।

विदितपरमतत्त्वास्ते मुनीन्द्राश्च नित्यं मम विशदसुखश्रीकारणं सन्तु सन्तः ॥८१॥

इति कथाकोशे द्वितीयचक्रवर्त्तिसगरस्य कथा समाप्ता।

५५. मृगध्वजस्य कथा

नत्वा जिनं महाभक्त्या त्रैलोक्यप्रभुपूजितम्। वक्ष्ये मृगध्वजाख्यानं पूर्वाचार्यैः प्रभाषितम् ॥१॥

उधर भागीरथ ने जब अपने भाइयों का मोक्ष प्राप्त करना सुना तो उसे भी संसार से बड़ा वैराग्य हुआ। वह फिर अपने वरदत्त पुत्र को राज्य सौंप आप कैलाश पर शिवगुप्त मुनिराज के पास दीक्षा ग्रहण कर मुनि हो गया। भगीरथ ने मुनि होकर गंगा के सुन्दर किनारों पर कभी प्रतिमायोग से, कभी आतापन योग से और कभी और किसी आसन से खूब तपस्या की। देवता लोग उसकी तपस्या से बहुत खुश हुए और इसीलिए उन्होंने भक्ति के वश हो भगीरथ के चरणों को क्षीर-समुद्र के जल से अभिषेक किया, जो कि अनेक प्रकार के सुखों का देने वाला है। उस अभिषेक के जल का प्रवाह बहता हुआ गंगा में गया। तभी से गंगा तीर्थ के रूप में प्रसिद्ध हुई और लोग उसके स्नान को पुण्य का कारण समझने लगे। भगीरथ ने फिर कहीं अन्यत्र विहार न किया। वह वहीं तपस्या करता रहा और अन्त में कर्मों का नाशकर उसने जन्म, जरा, मरणादि रहित मोक्ष का सुख भी यहीं से प्राप्त किया ॥७४-८०॥

केवलज्ञानरूपी नेत्र द्वारा संसार के पदार्थों को जानने और देखने वाले, देवों द्वारा पूजा किए गए और मुक्तिरूप रमणीरत्न के स्वामी श्रीसगर मुनि तथा जैनतत्त्व के परम विद्वान् वे सगरसुत मुनिराज मुझे वह लक्ष्मी दें, जो कभी नाश होने वाली नहीं है और सर्वोच्च सुख की देने वाली है ॥८१॥

५५. मृगध्वज की कथा

सारे संसार द्वारा भक्ति सहित पूजा किए गए जिन भगवान् को नमस्कार कर प्राचीनाचार्यों के कहे अनुसार मृगध्वज राजकुमार की कथा लिखी जाती है ॥१॥

अयोध्या नगरे रम्ये राजा सीमन्धरोभवत्। तत्प्रिया जिनसेनाख्या तयोः पुत्रो मृगध्वजः ॥२॥
 राजकीयोपि तत्रैको महिषो भणितो जनैः। समायाति प्रयात्येव पादयोश्च पतत्यलम् ॥३॥
 क्रीडन्तं पुष्करिण्यां तं समालोक्यैकदा पशुम्। मन्त्रिश्रेष्ठिकुमाराभ्यां सहायातो मृगध्वजः ॥४॥
 राजपुत्रो जगौ तत्र मांसासक्तः स्वसेवकम्। पश्चिमं चरणं चास्य मह्यं देहीति पापधीः ॥५॥
 तथा कृते च भृत्येन महिषः सोपि कष्टतः। त्रिभिः पादैर्नृपस्याग्रे गत्वा संपतितस्तदा ॥६॥
 राजा सीमन्धरस्तस्मै जिनधर्मधुरन्धरः। सारपञ्चनमस्कारान्ददौ संन्याससंयुतान् ॥७॥
 परोपकारिणः केचित्सन्ति सन्तो गुणाकराः। चन्द्रार्ककल्पवृक्षोरुतोयदेभ्योतिसुन्दराः ॥८॥
 तत्प्रभावेन सौधर्मस्वर्गे देवो बभूव सः। श्रीमज्जैनेन्द्रसद्गमो देहिनां सुहितङ्करः ॥९॥
 पुत्रवृत्तान्तमाकर्ण्य ततो रुष्टेन भूभुजा। सिद्धार्थमन्त्रिणः प्रोक्तं मारय त्रीनपि द्रुतम् ॥१०॥
 तां वार्तां च ततः श्रुत्वा मन्त्रिश्रेष्ठिनृपात्मजाः। मुनिदत्तमुनेः पार्श्वे जैनीं दीक्षां समाश्रिताः ॥११॥
 ततो वैराग्यभावेन तपः कृत्वा सुदुस्सहम्। मृगध्वजो मुनिः सोपि जैनतत्त्वविदाम्बरः ॥१२॥

सीमन्धर अयोध्या के राजा थे। उनकी रानी का नाम जिनसेना था। इनके एक मृगध्वज नाम का पुत्र था। वह मांस का बड़ा लोलुपी था। उसे बिना मांस खाये एक दिन भी चैन न पड़ता था। यहाँ एक राजकीय भैंसा था। वह बुलाने से पास चला आता, लौट जाने को कहने से चला जाता और लोगों के पाँवों में लोटने लगता। एक दिन वह भैंसा एक तालाब में क्रीड़ा कर रहा था। इतने में राजकुमार मृगध्वज, मंत्री और सेठ के लड़कों को साथ लिए वहाँ आया। इस भैंसे के पाँवों को देखकर मृगध्वज के मन में न जाने क्या धुन समाई सो उसने अपने नौकर से कहा—देखो, आज इस भैंसे का पिछला पाँव काट कर इसका मांस खाने के लिए पकाना। इतना कहकर मृगध्वज चल दिया। नौकर उसके कहे अनुसार भैंसे का पाँव काट कर ले गया। उसका मांस पका। उसे खाकर राजकुमार और उसके साथी बड़े प्रसन्न हुए। इधर बेचारा भैंसा बड़े दुःख के साथ लंगड़ाता हुआ राजा के सामने जाकर गिर पड़ा। राजा ने देखा कि उसकी मौत आ गई है। इसलिए उस समय उसने विशेष पूछ-पाछ न कर, कि किसने उसकी ऐसी दशा की है, दयाबुद्धि से उसे संन्यास देकर नमस्कार मन्त्र सुनाया। सच है, संसार में बहुत से ऐसे भी गुणवान् परोपकारी हैं, जो चन्द्रमा, सूर्य, कल्पवृक्ष, पानी आदि उपकारक वस्तुओं से भी कहीं बढ़कर हैं। भैंसा मरकर नमस्कार मन्त्र के प्रभाव से सौधर्म स्वर्ग में जाकर देव हुआ। सच है, जिनेन्द्र भगवान् का उपदेश किया पवित्र धर्म जीवों का वास्तव में हित करने वाला है ॥२-९॥

इसके बाद राजा ने इस बात का पता लगाया कि भैंसा की यह दशा किसने की। उन्हें जब यह नीच काम अपने और मंत्री तथा सेठ के पुत्रों का जान पड़ा तब तो उनके गुस्से का कुछ ठिकाना न रहा। उन्होंने उसी समय तीनों को मरवा डालने के लिए मंत्री को आज्ञा की। इस राजाज्ञा की खबर उन तीनों को भी लग गई तब उन्होंने झटपट मुनिदत्त मुनि के पास जाकर उनसे जिन दीक्षा ले ली। इनमें मृगध्वज महामुनि बड़े तपस्वी हुए। उन्होंने कठिन तपस्या कर ध्यानाग्नि द्वारा घातिया कर्मों

क्षयं नीत्वा सुधीर्ध्यानाद् घातिकर्मचतुष्टयम्। केवलज्ञानमुत्पाद्य संजातो भुवनार्चितः ॥१३॥
महापापप्रकर्तापि प्राणी श्रीजैनधर्मतः। भवेत्त्रिलोक्यसंपूज्यो धर्मात्किं भो परं शुभम् ॥१४॥
स श्रीकेवललोचनोत्तिचतुरो भव्यौघनिस्तारको देवेन्द्रादिसमर्चितो हितकरो धीरो मृगादिध्वजः।
नाना शर्मयशःप्रबोधजनकैर्भक्त्या समाराधितो। दद्यान्मे भवतां च निर्वृतिपदं नित्यं महामङ्गलम् ॥१५॥
इति कथाकोशे मृगध्वजमुनेराख्यानं समाप्तम्।

५६. परशुरामस्य कथा

नमस्कृत्य जिनाधीशं संसाराम्भोधितारणम्। श्वेतरामस्य संवत्स्रि चरित्रं चित्रकारणम् ॥१॥
अयोध्यापत्तने राजा कार्तवीर्योत्तिमूढधीः। पद्मावती महाराज्ञी तस्यासीत्प्राणवल्लभा ॥२॥
अटव्यां तापसावासपल्लिकायां च तापसः। रेणुका कामिनीनाथस्तत्रास्ते यमदग्निवाक् ॥३॥
तयोः पुत्रौ मनःप्रीतौ श्वेतरामस्तु पूर्वकः। महेन्द्ररामनामा च द्वितीयः प्राणवल्लभः ॥४॥
एकदा रेणुकाभ्राता वरदत्तो मुनीश्वरः। तत्पल्लिकासमीपेऽसौ वृक्षमूले सुखस्थितः ॥५॥

का नाश किया और केवलज्ञान प्राप्त कर संसार द्वारा वे पूज्य हुए। सच है, जिनधर्म का प्रभाव ही कुछ ऐसा अचिन्त्य है जो महापापी से पापी भी उसे धारण कर त्रिलोक-पूज्य हो जाता है और ठीक भी है, धर्म से और उत्तम है ही क्या? वे मृगध्वज मुनि मुझे और आप भव्य-जनों को महा मंगलमय मोक्ष लक्ष्मी दें, जो भव्य-जनों का उद्धार करने वाले हैं, केवलज्ञानरूपी अपूर्व नेत्र के धारक हैं, देवों, विद्याधरों और बड़े-बड़े राजाओं-महाराजाओं से पूज्य हैं, संसार का हित करने वाले हैं, बड़े धीर हैं और अनेक प्रकार का उत्तम से उत्तम सुख देने वाले हैं ॥१०-१५॥

५६. परशुराम की कथा

संसार-समुद्र से पार करने वाले जिनेन्द्र भगवान् को नमस्कार कर परशुराम का चरित्र लिखा जाता है जिसे सुनकर आश्चर्य होता है ॥१॥

अयोध्या का राजा कार्तवीर्य अत्यन्त मूर्ख था। उसकी रानी का नाम पद्मावती था। अयोध्या के जंगल में यमदग्नि नाम के एक तपस्वी का आश्रम था। इस तपस्वी की स्त्री का नाम रेणुका था। इसके दो लड़के थे। इसमें एक का नाम श्वेतराम था और दूसरे का महेन्द्रराम। एक दिन की बात है कि रेणुका के भाई वरदत्त मुनि उस ओर आ निकले। वे एक वृक्ष के नीचे ठहरे। उन्हें देखकर रेणुका बड़े प्रेम से उनसे मिलने को आई और उनके हाथ जोड़कर वहीं बैठ गई। बुद्धिमान् वरदत्त मुनि ने उससे कहा-बहिन, मैं तुझे कुछ धर्म का उपदेश सुनाता हूँ। तू उसे जरा सावधानी से सुन! देख, सब जीव सुख को चाहते हैं, पर सच्चे सुख के प्राप्त करने की कोई बिरला ही खोज करता है और इसीलिए प्रायः लोग दुःखी देखे जाते हैं। सच्चे सुख का कारण पवित्र सम्यग्दर्शन का ग्रहण करना है। जो पुरुष सम्यक्त्व प्राप्त कर लेते हैं, वे दुर्गतिओं में फिर नहीं भटकते। संसार का भ्रमण भी